शादीख़ाना आबादी

सैय्यिदुल उलमा आयतुल्लाहिल उज़मा सै0 अली नक़ी नक़वी

(दूसरी क़िस्त)

शौहर व बीवी के आपसी हक़

याद रखना चाहिए कि मर्द की पैरवी औरत पर उस तरह की नहीं वाजिब है जिस तरह बाप की औलाद पर। बाप की इताअत का ऐसा दर्जा है कि औलाद कोई बात कर ही नहीं सकती। और हर बात पैरवी करने वाली है जब तब कि ख़ुदा के अहकाम से न टकराए। यहाँ तक कि अगर वह किसी मुस्तहेब काम से रोक दें तो उसे करना सही नहीं होगा। ज़ियारते सैय्यिदुश्शोहदा सही नहीं है अगर बाप रोक दे, शौहर की इताअत बीवी पर उन चीज़ों में है जो हक़ शौहर और बीवी से जुड़े हैं जैसे घर से क़दम निकालना औरत के लिए जाएज़ नहीं। यहाँ तक कि बाप को बीमार होने पर देखने भी नहीं जा सकती अगर बाप मर जाए तो उसके कफ़न व दफ़न में भी शौहर की इजाज़त के बग़ैर नहीं जा सकती। इन मामलों में शौहर को हक़ दिया है लेकिन ज़िन्दगी के मामलों में शौहर बीवी को मजबूर नहीं कर सकता है और ख़ुदा के हुक्म के ख़िलाफ पैरवी जाएज़ नहीं है।

हम देखते हैं कि बहुत से शौहर अपनी बीवी को ख़ास अज़ीज़ों के सामने करने पर ज़ोर देते हैं। मैं सच कहता हूँ कि यह बिलकुल नाजाएज़ है और औरत पर इस हुक्म में पैरवी जाएज़ नहीं है कि इसमें शौहर का कहना माने। अगर सामने होगी तो यह भी गुनाहगार होगी और वह भी गुनाहगार होगा।

अज़ीज़ों के सामने होना कोई अच्छी बात नहीं है आपके यहाँ जो पर्दा उठ रहा है मैं सच कहता हूँ कि वह मज़हबी फर्ज़ की हैसियत से अन्जाम ही नहीं दिया गया। अगर मज़हबी फर्ज़ की हैसियत से होता तो आज यह सभी लोग जिनको शरीअत ने नामहरम क़रार दिया है नामहरम होते और जिनको महरम क़रार दिया है वह महरम होते। आपने खुद तैय कर लिया है जिसकी वजह से ख़राब नतीजे पैदा होते हैं।

शीश महल में एक साहब ने कहा था कि क्या पर्दे वाले घरानों में इस तरह के हालात नहीं पेश आते जिन्हें आप बेपर्दगी का नतीजा क़रार देते हैं। मैंने कहा ज़रूर पेश आते हैं लेकिन वह भी बेपर्दगी का नतीजा होते हैं। यानी अक्सर उन ही रिश्तेदारों के हाथों जिन्हें शरीअत ने नामहरम क़रार दिया है मगर आप उन्हें महरम बना देते हैं।

मेहर

शादी में महर एक ज़रूरी चीज़ है। मगर क्या इतना मेहर कि जिसका ख़याल भी पूरी तरह नहीं हो सकता। यह बीमारी लखनऊ में सबसे ज़्यादा पाई जाती है। मैंने बाहर देखा कि यह मुसीबत इतनी ज़्यादा नहीं है। क्या बात? यहाँ एक ज़माना था, सलतनत थी, उस वक़्त हर शख़्स बादशाह था। इसलिए उनकी नज़र में सत्तर हज़ार रुपये ऐसे थे जैसे हमारे लिये सत्तर हज़ार पैसे। बल्कि हम में अक्सर ऐसे भी नहीं जिनके पास सत्तर हज़ार पैसे हों। न कि सत्तर हज़ार रुपये और कहाँ सत्तर हज़ार सुर्ख़ सुलतानी ऐसी चीज़ जो कभी देखी नहीं उसे आप क़र्ज़ के तौर पर अपने ऊपर ओढ़ लेते हैं यह किस ख़ुदा ने कहा है?

यह मेहर कोई मामूली चीज़ नहीं है। यह

क़र्ज़ है जो आपके ज़िम्मे पर आता है। इसका देना उसी तरह ज़रूरी है जिस तरह से तमाम क़र्ज़ों का देना ज़रूरी है। नतीजा इस तरीक़े का यह हुआ कि सरकार की तरफ से हैसियत के हिसाब से उसूल तैय हो गया।

अब बताइये कि शरीअत का तैय किया हुआ उसूल किसने तोड़ा? ख़ुद हमारे तरीक़े ने। अगर हम महेर उसी उसूल पर तैय करते जो अक़्ल में आ सके तो हम उस उसूल के टूटने की वजह न बनते। लेकिन हमने शरीअत के हुक्म का इस्तेमाल इस तरह किया कि वह एक बेकार चीज़ हो गई आपका महेर कोई चीज़ नहीं रहा। मैं तो कहता हूँ कि सबसे पहले तो वह होना चाहिए जो सैय्यिदए आलम (स0) का मेहर था (मुझे ख़ुशी है कि इस वक़्त जो अक़्द हो रहा है उसमें वही महेर होगा जो सैय्यिदए आलम (स0) का मेहर था) लेकिन अगर आप बढ़ाना ही चाहते हैं तो इतना बढ़ाइये कि उम्र भर में मुश्किल से अदा हो सके –लेकिन इतना– जिसका चौथाई क्या दस्वां हिस्सा भी वह अदा न कर सके। और फिर लुत्फ यह कि इतने महेर में मामला हो जाता है। वह कहते हैं पचास हज़ार तो वह कहते हैं तीस हज़ार। यह क्या है? यह तकल्लुफ करना भी एक क़ानून बना लिया गया है। महेर इतना होना चाहिए कि अक़लन अदा कर सके। ऐसी चीज़ें जो आदत के ख़िलाफ हों लेकिन ख़ुदा की क़ुदरत में दाख़िल हों तो उनको मोजिज़ा कहा जाता है मगर मोजिज़ा हर शख़्स के लिए मुमकिन नहीं है। अगर हर शख़्स के लिए मुमकिन हो तो मोजिज़ा, मोजिज़ा न रहे। मोजिज़ा की उम्मीद हर शख़्स को नहीं करनी चाहिए। इस तरह का मेहर तैय करना जो ख़्वाबो ख़याल में भी न आए इसका नतीजा है कि शौहर के दिल में ख़याल होगा कि यह बेकार बात है। इसका मतलब यह है कि वह अक़्द को कोई चीज़ नहीं समझता। और अगर वह ऐसा समझे तो हक़ीक़त में ईजाब व क़बूल ही नहीं हुआ।

जिस चीज़ का नाम है करने का इरादा जो ईजाब व क़बूल की हक़ीक़त है वह नहीं हासिल होगा तो अक़्द बातिल होगा। ज़रूरत है इस बात की कि उन सभी चीज़ों में ख़ानदाने रिसालत के तरीक़े का ख़याल रखा जाए। रसूल (स0) की एक इकलौती लड़की थी। क्या रसूल (स0) के दिल में तमन्नाएं न होंगी। आपको मालूम है कि हज़रत (स0) सैय्यिदा की कितनी इज़्ज़त करते थे, कोई बाप अपनी लड़की की ताज़ीम (Respect) के लिए खड़ा नहीं होता लेकिन रसूल (स0) अपनी बेटी की ताज़ीम (Respect) में खड़े हो जाते थे। इतनी इज़्ज़त करते थे कि हाथों को चूमते थे, इतनी मुहब्बत करते थे कि जब किसी जंग पर जाते थे तो सबसे बाद में सैय्यिदए आलम (स0) से मिलकर जाते थे और जब वापस आते थे तो सबसे पहले सैय्यिदए आलम से मिलते थे। तो क्या रसूल इतना भी नहीं कर सकते थे कि जितना हम अपनी लड़कियों के लिए कर लेते हैं। अगर रसूल (स0) को अपनी बेटी के लिए रुपये की ज़रूरत होती तो मैं सच कहता हूँ कि मुसलमान रुपयों का ढेर लगा देते। आपको मालूम है कि मुसलमानों ने कहा था हमारी तबलीग़ में आपने बड़ी कोशिश की है आप कोई हक़ तैय कीजिये तो यह आयत नाज़िल हुई कि ''मैं कोई हक़ नहीं तैय करता सिवाए अपने रिश्तेदारों की मुहब्बत के।''

अब्दुर्रहमान बिन औफ की हैसियत ऐसी थी जिनके कई सौ जानवर थे। इसी तरह से और बहुत से रसूल के सहाबी थे तो अगर रसूल (स0) इशारे में भी कह देते तो मुसलमान इतना रुपया न इकटठा कर देते आपके सामने? मगर वहाँ तो मतलब ही यह न था। यह मैंने दुनिया के एतेबार से कहा वरना आपका अक़ीदा तो यह है कि रसूल (स0) चाहते तो कंकरियाँ मोती और नगीने बन जाते मगर यह अक़ीदे के बारे में है आम ज़िन्दगी के क़ानून के हिसाब से नहीं क्योंकि रिसालतमॉब और अइम्मा (अ0) अपने पहचाने हुए

क़ानून में आम ज़रियों के हिसाब से अमल करते थे फिर भी यह सब जानते हैं कि आपने किस तरह शादी की। आपके मालूम है कि आपने अपनी उस सबसे अज़ीज़ बेटी का अक़्द अपने सबसे अज़ीज़ भाई के साथ जिस सूरत से किया वह इस दुनिया की तारीख़ में यादगार है।

रिसालतमॉब ने दहेज़ भी दिया था। मगर क्या दहेज़ था (आप भी अपनी हैसियत के हिसाब से दें तो कोई हरज नहीं है मगर इसके लिए यह अच्छा नहीं है कि लड़कियों को बिठा रखा जाए) सामान क्या दिया था? जो चीज़ें लड़की और दामाद के लिए काम आने वाली समझते थे। मैं आपसे यह नहीं कहता कि आप बिलकुल उसी तरह चक्की दीजिये, चर्खा दीजिये, मैं तो कहता हूँ कि ज़िन्दगी की ज़रूरतों के हिसाब से जो कुछ आपसे हो सके वह दीजिये। यह नहीं होना चाहिए कि लड़कियों की शादी के लिए दरख़्वास्तें लिखवाई जा रही हैं मदद की ताकि लोग मदद करें। मेरे पास एक साहब दरख़्वास्त लाए। मैंने कहा कि मैं न लिखूँगा, उनको बड़ा तअज्जुब हुआ। मैंने कहा आख़िर शादी के लिए रुपये की क्या ज़रूरत है? उन्होंने कहा कम से कम एक पानदान, कुछ टूटे–फूटे हुए बर्तन, कुछ जोड़े कपड़े तो हों। मैंने कहा यह सब न होगा तो क्या होगा उन्होंने कहा ज़िल्लत होगी। मैंने कहा इसमें ज़िल्लत होगी और एक के सामने हाथ फैलाने में ज़िल्लत नहीं है।

सैय्यिदए आलम का महेर आपको मालूम है एक सौ सात रुपये था और आपकी नज़र में महेर ज़्यादा होना औरत की इज़्ज़त है मगर शरीअत में औरत के लिए महेर का ज़्यादा होना ज़िल्लत की वजह है।

वलीमा भी शरीअत में सुन्नत है मगर हैसियत के हिसाब से। यह न हो कि वलीमा इस तरह किया जाए कि दो दिन तो ख़ूब तारीफें हुईं मगर जिस वक़्त घर पर कुर्क़ी आएगी और नीलाम हो रहा होगा तो यही तारीफ करने वाले बुरा कहते होंगे और कहेंगे कि लड़की की शादी में अपने को तबाह कर दिया। यह बेकार की रस्मों और यह हिन्दुओं की तक़लीद ऐसी चीज़ें हैं जो हमें बर्बादी की तरफ ले जा रही हैं।

यह समझना कि अब तक उलमा ने इन चीज़ों के सुधार पर ज़ोर क्यों नहीं दिया, ठीक नहीं है। जिस वक़्त जनाब ग़ुफ़रानमॉब (रह0) हिन्दुस्तान तशरीफ लाए आपको नहीं मालूम कि उस वक़्त क्या–क्या होता था। शियों के यहाँ शैख़ सद्दू का बकरा, अहमद कबीर की गाए और ना मालूम किस की कढ़ाई, यह सब कुछ होता था, भवानी जी की पूजा होती थी।

सुधार का तरीक़ा यह है कि हमेशा धीरे–धीरे वाली सूरत इख़्तियार की जाए। आपको मालूम है कि इस्लामी शरीअत में हमेशा से इस हिक्मत और ज़रूरत को सामने रखा गया है। जिस दिन से रिसालतमॉब भेजे गये उसी दिन से नमाज़ व रोज़ा वग़ैरा इतने समझदारी के पहलू रखते थे मगर आपको मालूम है कि उनके अहकाम 1 हिजरी, 2 हिजरी, 3 हिजरी में लागू हुए। जनाब ग़ुफ़रानमॉब ने पहले उन चीज़ों को मिटाया जो लोगों को कुफ़्र और शिर्क की तरफ ले जा रही थीं लेकिन इसके माने यह नहीं हैं कि हम उसी नुक़्ते पर रहें जिस नुक़्ते तक उन्होंने सुधार कर दिया चूँकि अब इन चीज़ों के सुधार करने का काम हो चुका है। अब ज़रूरत है कि क़दम आगे बढ़ाया जाए। ज़रूरत है कि इस वक़्त हम अहलेबैत की शरीअत को और उनकी सीरत को सामने रखें। शादी को एक मज़हबी रस्म समझा जाए और उन बेकार रस्मों से अलग रहा जाए। मुझे बहुत ही ख़ुशी है कि इन्बे हुसैन साहब ने आपके सामने यह मिसाल रखी है जिसमें बेकार रस्में अन्जाम नहीं दी गईं यह भी एक अच्छी मिसाल है जो पेश की जा रही है और मैं उम्मीद करता हूँ कि बहुत जल्द दुनिया में बहुत सी ऐसी मिसालें मिलेंगी।

(26 ज़ीक़ादा 1357)